भगवान कृष्ण द्वारा कर्म योग की व्याख्या

हर व्यक्ति जीवन में समृद्ध होने के लिए जीवन प्रबंधन सीखना चाहता है, खुश रहना चाहता है, शांत मन चाहता है, और जीवन के उद्देश्य पर स्पष्टता प्राप्त करना चाहता है। भगवद् गीता में भगवान कृष्ण ने जीवन के हर पहलू को बडी गहराई से समझाया है। गीता में दिए गए तीन मार्ग, कर्म योग (क्रिया का योग), ज्ञान योग (ज्ञान का मार्ग) और भक्ति योग (भक्ति का मार्ग) हैं। सनातन धर्म को गलत तरीके से प्रदर्शित करने के लिए "कर्म योग" के बारे में बहुत सी भ्रांतियाँ फैलाई जा रही हैं। भ्रांतियों में से एक यह है कि व्यक्ति को केवल भगवान के प्रति समर्पण की आवश्यकता होती है और उसकी इच्छाएं किसी भी प्रकार के "कर्म" (कार्य) किए बिना पूरी हो जाएंगी। दूसरी ग़लतफ़हमी यह है कि जो लोग किसी भी प्रकार का काम करते हैं उन्हें वह मुफ़्त में करना चाहिए।

लोग सनातन धर्म का मजाक उड़ाते हैं, इन स्व-विकसित अर्थों के माध्यम से गलत धारणा और गलत इरादे से बाते फैलाते हैं। आईए समझते हैं कर्म योग का वास्तविक और गहरा अर्थ।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ २-४७

भगवान कृष्ण ने "निष्क्रियता में कर्म और कर्म में अकर्मण्यता" की अवधारणा को खूबसूरती से समझाया है। जब भगवान कृष्ण कहते हैं कि फल की अपेक्षा किए बिना ईमानदारी से अपना कर्तव्य निभाओ। इसका क्या मतलब है ?

मनोवैज्ञानिक रूप से, यदि हम किसी परियोजना/कार्य/गतिविधि पर काम करते हुए हम लगातार परिणाम पर ध्यान केंद्रित करते हैं, तो यह चिंता और एक प्रकार का अवांछित दबाव बनाता है जो दक्षता और रचनात्मकता को प्रभावित करता है, तनाव बढ़ाता है, कई मामलो मे रिश्तों को प्रभावित करता है, पूरी गतिविधि को बुरी तरह से प्रभावित करता हैं, जो कार्य आसानी से किया जा सकता था, यदि पूरा ध्यान, परिणाम के बारे में लगातार सोचने के बजाय, काम पर लगाया जाता तो। भगवान कृष्ण चाहते हैं कि हम आधे-अधूरे कर्म कर उस के परिणाम पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय हम जो कुछ भी करते हैं उसमें तल्लीन हो जाएं। जब कोई अपने पक्ष में बहुत सारी उम्मीदों के साथ परिणाम पर ध्यान केंद्रित करता है और यदि परिणाम योजना के तहत नही आता है, तो वह व्यक्ति निराश, उदास हो जाता है और भविष्य में जोखिम न लेने की मानसिकता विकसित करता है।

उदाहरण के लिए ; यह छात्रों के प्रदर्शन को बुरी तरह प्रभावित करता है जब वे पढ़ाई में 100% प्रयास

करने के बजाय केवल परिणाम पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जिससे परेशानीया बढ जाती है, नशीली दवाओं की लत लगती है , पढ़ाई में रुचि कम हो जाती है, जीवन उबाऊ लगने लगता है, एक कमजोर दिमाग बनाता है, अवसाद, चिंता और धीरे धीरे आत्महत्या की प्रवृत्ति विकसित होती है।

भगवान कृष्ण चाहते हैं कि हम वर्तमान क्षण में रहें और हर गतिविधि को दिव्य कार्य के रूप में करें, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, कोई भी अच्छा कार्य जो पसंद हो या नापसंद, आसान हो या कठिन, भले ही कोई भी आपके अच्छे काम के लिए आपकी सराहना न करे और कोई भी आपको कार्य करते हुए देख न रहा हो, आपका कार्य फिर भी आपको ईमानदारी से, प्रभावी ढंग से करना चाहिये, इसे दैवीय पूजा के रूप में मानना चाहिये जो आपकी प्रतिबद्धता और सही रवैये को दर्शाता है। नि:स्वार्थ सामाजिक कार्य केवल कर्म योग नहीं है, लेकिन जो कुछ भी सही इरादे से किया जाता है ; समाज, पर्यावरण और देश के लिए अच्छा होता है,जीवन मूल्य बढाता है, बिना अहंकार, लगाव और स्वार्थ के उद्देश्य से किया कार्य "कर्म योग" कहलाता है।

अहंकार व्यक्ति की असीमित और अवांछित इच्छाओं को पूरा करने के लिए जागरूकता, गतिशीलता, रचनात्मकता, अभिनव क्षमता, नेतृत्व की गुणवत्ता को बुरी तरह से प्रभावित करता है.
किसी भी कार्य या व्यक्ति के प्रति अत्यधिक लगाव अंतत: निराशा, नकारात्मकता लाता है जब चीजें इच्छा के अनुसार नहीं होती हैं. इसी कारण के वजह से भगवान कृष्ण कहते हैं, सब कुछ आनंद व पुरी लगन से करें लेकिन उसमें आसक्त न हों।

भगवद गीता कर्म योग 3.35
श्रेयान् स्वधर्मो विगुण: परधर्मात् स्वनुष्टितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेय: परधर्मो भयावह: ॥

इस श्लोक में, भगवान कृष्ण कहते हैं, "बस स्वयं बनो", अपने धर्म (सही मार्ग) का पालन करो। अपने विचार के प्रति वास्तविक रहें और सजगता के साथ सोचे आपको क्या बनना चाहिए। किसी और के जैसा बनने के लिए अपने आप के साथ छल न करे। भले ही आप एक बेहतरीन गोलमोल करने वाले खिलाडी हों, लेकिन आपके दिल में हमेशा डर बना रहेगा। जब आप "स्वयं" पर ध्यान केंद्रित करते हैं, तो आप अंतर्निहित क्षमता का पता लगाते हैं जो आपको नई ऊंचाइयों पर ले जा सकती है और सच्ची खुशी लाती है। भगवान कृष्ण कुछ श्लोकों में आंतरिक धन और क्षमता का पता लगाने के लिए एक नियमित अभ्यास के रूप में "ध्यान" का सुझाव देते हैं।

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते।
न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥3.4॥

कर्म से विरत रहने से व्यक्ति कर्म से मुक्ति प्राप्त नहीं करता ; न ही वह केवल त्याग से ही सिद्धि प्राप्त करता है। भगवान कृष्ण ने उपरोक्त श्लोक में सभी संदेहों को दूर किया है।

जो लोग अभी भी सवाल करते हैं और अपने एजेंडे के अनुरूप अर्थ बदलते हैं, उन्हें भगवद गीता का ईमानदारी से अध्ययन और स्वीकार करने की आवश्यकता है, तभी "जीवन और कार्य प्रबंधन की किताब

” के रूप में अच्छी तरह से सबके जीवन मे उतारा जा सकता है।

पंकज जगन्नाथ जयस्वाल
7875212161